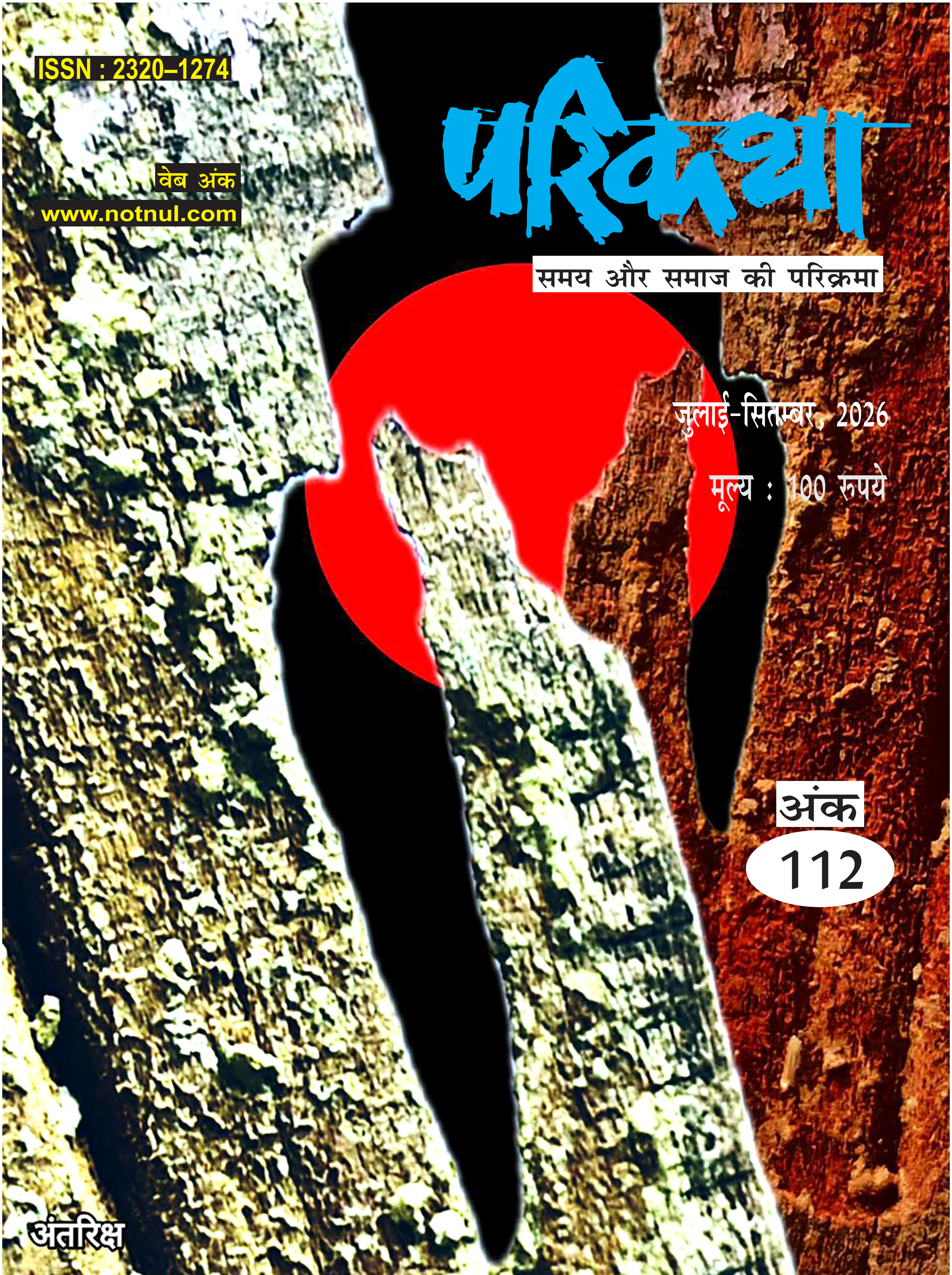
ISSN : 2320–1274
वेब अंक
www.notnul.com
परिकथा
समय और समाज की परिक्रमा
जुलाई-सितम्बर, 2026
मूल्य : 100 रुपये
अंक
112
अंतरिक्ष

सादर नमन

स्व. अनुज कुमार

(19.07.1973 – 26.08.2023)

की

स्मृतियों को

सादर नमन करते हुए

भावना

आश्तिका

एवं सभी परिवार–जन

•

सभी पदाधिकारी एवं कर्मचारी

E-Ashwa Automotive

पेंटिंग : टी.पी. पोद्दार, हजारीबाग मो.: 7488727991

RNI No. DELHI/2006/18309 July-Sep., 2026

‘परिकथा’ के लेखकों, पाठकों के लिए शुभकामनाएँ

•

बंशीलाल परमार

मो.: 9926494975

स्वत्वाधिकारी, प्रकाशक एवं मुद्रक रमाशंकर प्रसाद द्वारा डॉल्फिन प्रिन्टो-ग्राफिक्स, 1ई/18, चौथी मंजिल, झण्डेवालान एक्सटेंशन, नई दिल्ली-110055 फोन: 011-23592541-42 से मुद्रित करा कर, 102, बुडबरी टावर, चार्मवुड विलेज, सूरजकुंड रोड, नई दिल्ली-फरीदाबाद बॉर्डर-121009 से प्रकाशित एवं रमाशंकर प्रसाद (संक्षिप्त नाम शंकर) द्वारा सम्पादित।

सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक प्रक्रियाओं के साथ जीवंत और सतत संवाद

शैलेन्द्र चौहान

'परिकथा' पत्रिका का अप्रैल-जून 2026 कल ही मिला है। यह अंक अपने समग्र स्वरूप में एक ऐसी साहित्यिक पहल का उदाहरण बनकर सामने आता है जो केवल रचनात्मक अभिव्यक्ति तक सीमित नहीं रहती, बल्कि अपने समय की जटिल सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक प्रक्रियाओं के साथ एक जीवंत और सतत संवाद स्थापित करने का साहस भी रखती है। यह अंक आरंभ से ही पाठक को यह एहसास कराता है कि वह किसी साधारण साहित्यिक संकलन में नहीं, बल्कि एक ऐसे विचार-संसार के भीतर प्रवेश कर रहा है, जहाँ साहित्य अपने व्यापक अर्थों में जीवन का साक्ष्य बनता है।

"समय और समाज की परिक्रमा" जैसी अवधारणा यहाँ केवल एक आकर्षक वाक्य नहीं है, बल्कि यह पूरे अंक की संरचना और उसकी अंतर्धारा को दिशा देने वाला मूल भाव है। यह परिक्रमा स्थिर नहीं बल्कि गतिशील है- समाज के बदलते रूपों, संघर्षों, असमानताओं और उम्मीदों के साथ चलती हुई। यह अंक उस दौर में सामने आया है जब साहित्य के सामने केवल सौंदर्य और शिल्प के प्रश्न पर्याप्त नहीं रह गए हैं; अब उससे यह अपेक्षा भी की जाती है कि वह अपने समय की नैतिक और वैचारिक चुनौतियों का सामना करे, उन्हें पहचाने और उनके प्रति अपनी जिम्मेदारी निभाए। 'परिकथा' का यह अंक इस चुनौती को स्वीकार करता हुआ दिखाई देता है।

अंक की संरचना पर ध्यान दें तो यह सुस्पष्ट है कि संपादकीय दृष्टि ने विविधता को एक रचनात्मक उपकरण की तरह उपयोग किया है। यहाँ विभिन्न विधाओं यथा आलोचना, लेख, साक्षात्कार, कहानी, कविता, व्यक्तित्व, कृतित्व, पुस्तक चर्चा आदि का समुचित समावेश केवल औपचारिक नहीं है, बल्कि यह इस बात का संकेत है कि साहित्य को किसी एक खाँचे में सीमित नहीं किया जा सकता। यह विहंगावलोकन है। विविधता यहाँ बिखराव पैदा नहीं करती बल्कि एक साझा संवेदना और वैचारिक एकसूत्रता के भीतर जुड़ती है। हर विधा अपने-अपने तरीके से समकालीन यथार्थ के किसी न किसी पक्ष को उजागर करती है, जिससे पाठक को एक बहुआयामी दृष्टि प्राप्त होती है।

आलोचनात्मक टिप्पणियों का खंड इस अंक का एक मजबूत स्तंभ है। यहाँ प्रस्तुत लेख केवल साहित्यिक कृतियों की समीक्षा नहीं करते बल्कि वे उस व्यापक सामाजिक संदर्भ को भी सामने लाते हैं, जिसमें वे कृतियाँ जन्म लेती हैं। 'वर्तमान परिदृश्य का एक सशक्त और प्रतिनिधि दस्तावेज' जैसी टिप्पणियाँ यह स्पष्ट करती हैं कि पत्रिका अपने समय को दर्ज किए गए कार्य को गंभीरता से लेती है। यह दर्ज करना केवल घटनाओं का संकलन नहीं बल्कि उनके पीछे छिपी संरचनाओं और प्रवृत्तियों को समझने का प्रयास भी है। इसी क्रम में 'हिंदी व उर्दू के रिश्तों पर एक नजर' जैसी सामग्री सांस्कृतिक संवाद की उस परंपरा को पुनर्जीवित करती है, जो आज के विभाजित और ध्रुवीकृत समय में बेहद आवश्यक है। यह खंड यह संकेत देता है कि भाषा केवल अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं, बल्कि सांस्कृतिक सह-अस्तित्व का आधार भी है।

'जन्मशती विशेष' खंड में नामवर सिंह पर केंद्रित सामग्री इस अंक को एक विशिष्ट बौद्धिक गरिमा प्रदान करती है। नामवर सिंह की आलोचना-दृष्टि और उनकी विचार-यात्रा पर प्रस्तुत लेख यह दिखाते हैं कि साहित्यिक परंपरा के साथ संवाद कैसे स्थापित किया जाता है। यह

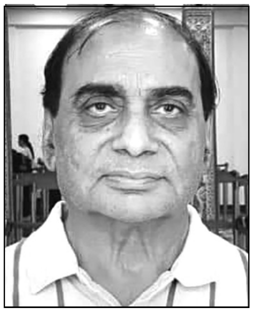

शैलेन्द्र चौहान

सुप्रतिष्ठित वरिष्ठ कवि,
साहित्यिक पत्रिका 'धरती' का सम्पादन।

सम्पर्क
34/242, सेक्टर-3, प्रतापनगर
जयपुर-302033 (राजस्थान)
मो.: 7838897877

संवाद श्रद्धांजलि भर नहीं है, बल्कि एक सक्रिय पुनर्पाठ है; जिसमें अतीत को वर्तमान की कसौटी पर परखा जाता है। इस खंड के माध्यम से पाठक को यह समझने का अवसर मिलता है कि आलोचना केवल मूल्यांकन का कार्य नहीं, बल्कि विचारों के विकास की एक निरंतर प्रक्रिया है। यह खंड आलोचनात्मक चेतना को पुनर्सक्रिय करने का एक महत्वपूर्ण प्रयास है।

परिदृश्य खंड में उपन्यासकारों के साथ किए गए संवाद इस अंक की एक और महत्वपूर्ण उपलब्धि हैं। संजीव, गरिमा श्रीवास्तव और योगिता यादव जैसे रचनाकारों के साथ बातचीत साहित्य के सृजन-प्रक्रिया को समझने का एक दुर्लभ अवसर प्रदान करती है। ये संवाद केवल औपचारिक प्रश्नोत्तर नहीं हैं बल्कि वे रचना के पीछे काम कर रही सामाजिक, राजनीतिक और वैचारिक प्रेरणाओं को उजागर करते हैं। इन बातचीतों से यह स्पष्ट होता है कि लेखक अपने समय से किस तरह प्रभावित होता है और किस तरह वह अपने अनुभवों को रचना में रूपांतरित करता है। इससे पाठक और रचनाकार के बीच एक संवाद स्थापित होता है जो साहित्य को अधिक जीवंत और प्रासंगिक बनाता है।

'आदिवासी आंदोलन, हिंदी साहित्य और इतिहास की समस्याएँ' जैसे लेख इस अंक की वैचारिक प्रतिबद्धता को और गहराई प्रदान करते हैं। यह विषय केवल समकालीन ही नहीं, बल्कि ऐतिहासिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। आदिवासी समाज और उनके संघर्षों को मुख्यधारा के साहित्य में अक्सर पर्याप्त स्थान नहीं मिलता। ऐसे में इस तरह के लेख यह दर्शाते हैं कि 'परिकथा' उन आवाजों को मंच देने का प्रयास कर रही है जो लंबे समय से हाशिए पर रही हैं। यह साहित्य की उस भूमिका को रेखांकित करता है, जिसमें वह केवल यथार्थ का प्रतिबिंब नहीं बल्कि परिवर्तन का माध्यम भी बन सकता है।

कहानी खंड इस अंक की रचनात्मक ऊर्जा का केंद्र बिंदु है। यहाँ प्रस्तुत कहानियाँ अपने कथ्य और शिल्प में भले ही भिन्न हों, लेकिन वे एक साझा सामाजिक संवेदना से जुड़ी हुई हैं। 'बाबा नूर', 'पानी का टैंकर', 'बंधुए', 'अपनत्व', 'बटर ब्रेड' और 'चित्रहार' जैसी कहानियाँ समाज के बदलते स्वरूप और उसमें मौजूद अंतर्विरोधों को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करती हैं। इन कहानियों में जीवन के छोटे-छोटे प्रसंगों के माध्यम से बड़े प्रश्न उठाए गए हैं-जैसे विस्थापन, संसाधनों का असमान वितरण, और मनुष्य के भीतर बढ़ती हुई असुरक्षा। यह खंड यह सिद्ध करता है कि कहानी आज भी अपने समय की सबसे प्रभावशाली विधाओं में से एक है।

कविता खंड में भी एक सशक्त और सजग उपस्थिति दिखाई देती है। 'सबसे खूबसूरत आदमी', 'मजदूर बस्ती से उठती खुशबू', 'लौटने की कोई तारीख', 'मुसहर' जैसी कविताएँ अपने शीर्षकों से ही एक वैचारिक दिशा की ओर संकेत करती हैं। यहाँ कविता केवल भावनात्मक अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि सामाजिक हस्तक्षेप का माध्यम बनती है। मेरी अपनी युद्ध पर केंद्रित कविताओं का शामिल होना, विशेषकर अमेरिकी-इस्राइली आक्रमणकारी मानसिकता पर केंद्रित, इस अंक में संप्रति वैश्विक संदर्भों की जरूरी उपस्थिति है। यह इंगित है कि हिंदी कविता अब केवल स्थानीय मुद्दों तक सीमित नहीं है, बल्कि वह वैश्विक राजनीति और उसके प्रभावों पर भी अपनी दृष्टि रखती है। कविताओं में भाषा की सादगी और बिंबों की तीक्ष्णता पाठक को गहरे स्तर पर प्रभावित करती है।

इस अंक की संपादकीय सजगता भी विशेष उल्लेखनीय है। मिनाज की बच्चियाँ एक बेहद संवेदनापरक, मर्मस्पर्शी और चिंतनीय वैश्विक सरोकार है। पत्रिका के संपादक और संपादक मंडल ने जिस संतुलन और विवेक के साथ इस अंक की सामग्री का चयन और संयोजन किया है, वह यह स्पष्ट करता है कि पत्रिका बहुपक्षीय विचार प्रस्तुत करती है। इसमें विभिन्न मतों और दृष्टिकोणों के लिए स्थान है, जिससे एक लोकतांत्रिक साहित्यिक वातावरण का निर्माण होता है। यह विशेषता आज के समय में अत्यंत महत्वपूर्ण है जब विचारों की विविधता पर लगातार दबाव बढ़ता जा रहा है।

पत्रिका का यह निर्णय कि वह अब केवल सदस्यों तक सीमित न रहकर व्यापक पाठक समुदाय तक पहुँचेगी, एक दूरदर्शी कदम है। यह न केवल इसके प्रभाव क्षेत्र को बढ़ाएगा, बल्कि नए पाठकों और लेखकों के साथ संवाद की संभावनाओं को भी विस्तारित करेगा। इससे साहित्यिक विमर्श अधिक समावेशी और जीवंत बन सकेगा।

अंततः, 'परिकथा' का यह अंक एक ऐसी साहित्यिक चेतना का प्रतिनिधित्व करता है, जो अपने समय के प्रति सजग, संवेदनशील और प्रतिबद्ध है। यह अंक पाठक को केवल पढ़ने के लिए नहीं, बल्कि सोचने, सवाल करने और संवाद करने के लिए प्रेरित करता है। इसमें न तो अनावश्यक आडंबर है और न ही आत्ममुग्धता; बल्कि एक सादगीपूर्ण, गंभीर और विचारशील दृष्टि है, जो इसे समकालीन हिंदी साहित्य में एक महत्वपूर्ण स्थान प्रदान करती है।

इस प्रकार 'परिकथा' अपने नाम को सार्थक करती है-यह केवल कथाओं का संसार नहीं रचती, बल्कि समय, समाज और मनुष्य के बीच एक सतत और जीवंत परिक्रमा करती है। यही इसकी सबसे बड़ी शक्ति है और यही इसे विशिष्ट बनाती है। स्पष्टतः पत्रिका हिंदी साहित्य जगत में अपनी एक विशिष्ट पहचान को रेखांकित करती है।

❑ ❑ ❑

संकटों को पहचानने का विवेक

शकील सिद्दीकी

'परिकथा' का अंक 111 देखने के उपरांत जो भाव सबसे पहले मन पकड़ता है वह है विशिष्ट कथा पत्रिका होने के नाते इसमें प्रकाशित कहानियों का अपने समय के सराकारी चिंताओं से गहरी संवेदनशीलता से संलग्न होना। अपने समय के भयावह यथार्थ को उद्घाटित करते हुए वे कहानी सृजन को नया आयाम देती हैं, परम्परा में रहते हुए वे कहानी को पहले जैसी नहीं रहने देतीं। नित नई विराटता तलाश करते हुए वे उसकी प्रासंगिकता को तो रेखांकित करती ही हैं, नये क्षितिजों की भी खोज करती हैं। इस खोज में पूरी पत्रिका अपनी समूची सामग्री के साथ अभियानरत महसूस होती है। यहाँ तक कि सम्पादकीय भी। अंक 105 में गाजा के बच्चों की हालतेजार की रूदाद के क्रम में अंक 111 में मिनाब की बच्चियों तक की चिंता किसी औपचारिकता को निबाहना भर नहीं, विश्व पर थोपे गये एक गैरजरूरी अमानवीय युद्ध की पूरी शिद्दत से नकारना है। यह नकार समय और समाज की परिक्रमा का साक्ष्य माना जा सकता है।

कथा केन्द्रित होने के बावजूद अनेक पत्रिकाएँ पाठकों को चमत्कृत कर चुकी हैं। 'सारिका' और 'हंस' के नाम प्रमुखता से लिए जा सकते हैं। सामग्री गत विविधता 'परिकथा' को भी अलग पहचान देती है। यह विविधता चमत्कृत नहीं करती, हालात के बारे में संजीदगी से सोचने का दबाव बनाती है। अरुण कुमार का 'नामवर जी की विचार-यात्रा' लेख पत्रिका के महत्व में तो इजाफा करता ही है, सामग्री के गंभीर व सचेत चयन की ओर भी संकेत करता है, साथ ही वह नामवर सिंह को और उनके बारे में बार-बार पढ़ने की जरूरत को भी रेखांकित करता है। आलोचना की वाचिक परम्परा को विपुलता में समृद्ध व धारपरक बनाने में उनके बहुमूल्य योगदान का सम्मान किए बिना नामवर जी को ठीक से जाना नहीं जा सकता। वह उनके आलोचक व्यक्तित्व का अत्यंत उत्तेजक व महत्वपूर्ण पक्ष है। नामवर जी ही थे जिन्होंने कहानी को छापामार लड़ाई कहा था। 'परिकथा' की कहानियाँ इस युद्ध में शामिल रही हैं ज्यादातर। संजीदगी से भरे विचारशील धारदार लेखक आलोचक के रूप में मृत्युंजय सिंह की चर्चा होती रही है। नामवर सिंह की वाचिक परम्परा पर केन्द्रित उनका लेख गंभीर व महत्वपूर्ण तो है ही फिर फिर पढ़ने की अपेक्षा भी रचता है। 'एक अचूक पहचान के आगे समीक्षा के सैकड़ों सिद्धांत फीके हैं।' अपने लेख में यह कथन दर्ज करते हुए पूनम सिंह हमारे समय के बार-बार चकित करने वाले एक आलोचक को धरा से बहुत ऊपर पहुँचा देती हैं। उनकी यह स्थापना भी बहुत महत्वपूर्ण है कि 'वाचिक विमर्शकार' के रूप में नामवर सिंह जी ने हिन्दी आलोचना को अकादमिक स्थूलता से पूर्णत: मुक्त किया। 'आदिवासी आन्दोलन, हिन्दी साहित्य और इतिहास

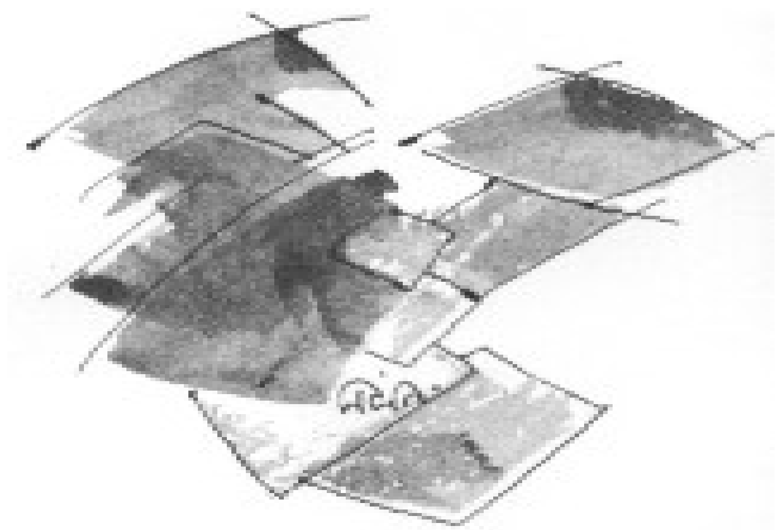

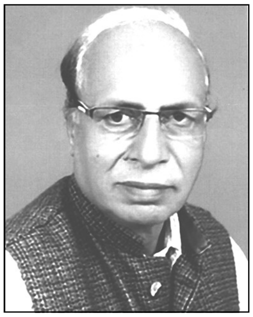

शकील सिद्दीकी

सुप्रतिष्ठित कथाकार चिंतक।
विभिन्न पत्रिकाओं में रचनाएं प्रकाशित।

संपर्क
207, बी.सी.सी. ग्रेविटी
टिकैत राय तालाब, राजाजी पुरम
लखनऊ–17 (उत्तर प्रदेश)
मो. : 9839123525

की समस्याएँ। लेख झकझोरता भी है और विचलित भी करता है। राकेश कुमार सिंह की प्रतिबद्ध विद्वता का लोहा हिन्दी के सामान्य पाठक ही नहीं, बड़े विद्वान भी मानते रहे हैं। आदिवासी जीवन, उनके जुझारू संघर्षों के प्रति राकेश कुमार सिंह की चिंता नई–नई नहीं है। उनका लेख बताता है कि इन कठिनाइयों से भरे उपेक्षा के शिकार जीवन के प्रति उनकी बेचैनी अपेक्षित दायित्व बोध के साथ समय से ताल मिलाती चलती है। वह रेखांकित करते हैं कि इस शिकायत के बावजूद कि आदिवासी जीवन उनके संघर्षों और चरित्रों को लेकर जैसा और जितना लिखा जाना चाहिए नहीं लिखा जा सका, वह यह तथ्य दर्ज करते हैं कि तकरीबन 60–70 उपन्यास हिन्दी में हैं जो आदिवासी समाज की समस्याओं औंर समकालीन आदिवासी आन्दोलनों को लेकर लिखे गये हैं। उपन्यास के पक्ष में वह यह तथ्य भी दर्ज करते हैं कि कोई इतिहास अंतिम नहीं होता। जहाँ तक दूसरे लेखों तथा समीक्षाओं का प्रश्न है तो हरियश राय और जवरीमल्ल पारख ने तो कमाल ही कर दिया है। हरियश राय की पुस्तक 'विभाजन की विभिषिका' को प्रकाशित हुए बहुत समय नहीं हुआ, फिर भी उसकी अनेक समीक्षाएँ आ चुकी हैं। जवरीमल्ल जो भी लिखते हैं, यादगार लिखते हैं। फिर भी उनके इस कथन से असहमति बनती है कि यह विभाजन धर्म के आधार पर हुआ इसलिए मुसलमानों के लिए पाकिस्तान और हिन्दुओं के लिए भारत बना। भारत तो पहले ही से था और उसमें हिन्दुओं का बाहुल्य भी था। मुसलमानों के लिए अलग देश की माँग जिन्ना तथा मुस्लिम लीग के दूसरे नेताओं ने उठाई थी। समीक्षा में जवरीमल्ल जी की यह स्थापना ध्यान खींचती है कि पुस्तक में हरियश ने विभाजन से सम्बन्धित जो सूचनाएँ दी हैं, जिनमें भीषण दंगे तथा महात्मा गाँधी की हत्या की घटनाएँ भी शामिल हैं, ये केवल सूचनाएँ नहीं हैं बल्कि इन सूचनाओं को इस तरह पेश किया गया है कि उसमें लेखक का अपना दृष्टिकोण भी व्यक्त हुआ है। इसमें सन्देह नहीं कि समीक्षा सम्पूर्णता लिए हुए है। विस्तार से लिखी है समीक्षक ने। जिस प्रकार उपन्यासकार ने विभाजन के सभी पक्षों को समेटने अभिव्यक्त करने

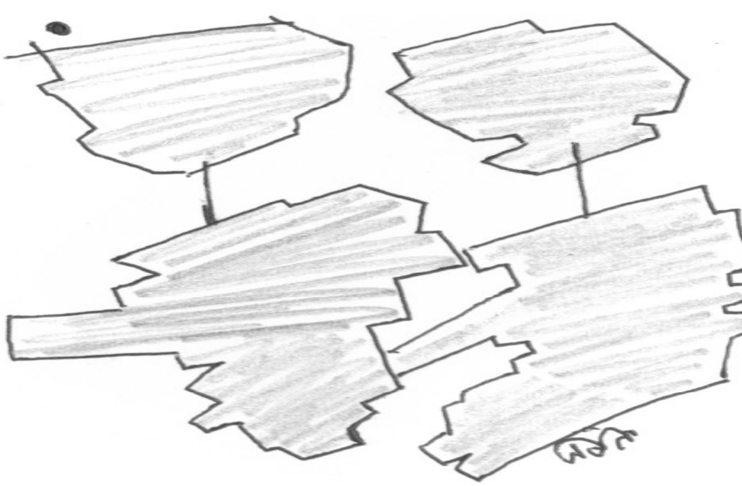

की कोशिश की है। समीक्षा पढ़ते हुए मन में बार–बार किताब को तुरन्त पढ़ने की इच्छा का उछाल मारना स्वाभाविक है। हरियश राय और जवरीमल्ल कलम के दो जादूगर, विशद अध्ययन के दो उच्च प्रतिमान हैं।

युद्ध–सम्बन्धी रचनाएँ जहाँ एक ओर अंक 111 को खोजकर पढ़ने की विशिष्टता देती हैं तो उसे अतिरिक्त गरिमा भी प्रदान करती है। पत्रिका के सम्पादक को भी विराट दृष्टि वाले, समय के महासंकटों की खरी पहचान वाले नितांत संवेदनशील पारखी के रूप में भी सामने लाती हैं। विचार होना चाहिए कि ऐसे समय में जब कई–कई पत्रिकाएँ अपनी वैचारिक आधारभूमि से विचलित होते हुए कहीं भी भटकते हुए दिख जाती है, तब कौन से कारण हैं कि 'परिकथा' परम्परागत वैचारिक दृढ़ता के साथ आगे बढ़ रही है। युद्ध अंक की केन्द्रीय चिंता है। समर्थ रचनाकार सूर्यनाथ सिंह तथा आदित्य अभिनव की कहानियाँ यह समझ दे पाने में सफल रही हैं कि युद्ध पर लिखने के लिए या युद्ध में शामिल होना पड़ता है या फिर युद्ध को अपने भीतर उतारना पड़ता है। कवि नरेश सक्सेना की पंक्ति याद आती है 'नदी पार नहीं होती नदी में उतरे बिना'। शैलेन्द्र चौहान की कविताएँ न पढ़ना युद्ध की भयावहता से मुँह मोड़ना है।

❑ ❑ ❑

समय और समाज को देखने की दृष्टि, सत्य से साक्षात्कार

डॉ. राहुल शर्मा

'परिक्रमा' अर्थात् सत्य से साक्षात्कार। सत्य से साक्षात्कार अर्थात् विश्व और समाज का अन्वेषण। साहित्य भी इससे अछूता नहीं है। वह निरंतर समय और समाज को देखने और समझने की दृष्टि प्रदान करता है। इस अन्वेषण के लिए जिस दृष्टि की आवश्यकता होती है, वह परिक्रमा के दौरान ही विकसित होती है।

आज जिस तरह की परिस्थितियों से पूरा विश्व जूझ रहा है, वह समय की भयावहता के साथ उसकी विसंगतियों को भी दर्शाता है । सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक परिदृश्य में घुसपैठिये विचारों की धमक चारों ओर विद्यमान है। ऐसे में नई दिल्ली से शंकर जी तथा उनके संपादक मंडल (डॉ अब्दुल बिस्मिल्लाह, हरियश राय, महेश दर्पण, सूर्यनाथ सिंह) द्वारा नियमित प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'परिकथा' समय और समाज की निरंतर परिक्रमा कर रही है । पत्रिका का 111 वाँ अंक (अप्रैल-जून) इसी परिक्रमा का एक सार्थक परिणाम है।

आरंभ से बात शुरू करें तो पहले पृष्ठ पर 110 वें अंक पर ममता कालिया द्वारा व्यक्त किए गए विचारों की एक सारगर्भित टिप्पणी है। जिसमें प्रकाशित कहानियों के साथ-साथ सफल संपादकीय पर भी रौशनी डाली गई है। बाद में चंद्र बिंदु और और डॉ. शाहीन सबा की टिप्पणियाँ वर्तमान समय में पत्रिका की भूमिका को दर्शाते हैं। साथ ही प्रकाशित कहानियों, कविताओं और लेखों पर गंभीर समीक्षात्मक टिप्पणियाँ एक प्रकार से पत्रिका के सह वाक्य 'समय और समाज की परिक्रमा' को चरितार्थ करते हैं। जानकीप्रसाद शर्मा के निबंध पर आधारित 'हिंदी व उर्दू के रिश्तों पर एक नजर' शीर्षक सुमसुमी बोरा का लेख अपने शीर्षक के मद्देनजर जानकीप्रसाद शर्मा की भाषायी विरासत की समझ, दोनों भाषाओं की व्याकरणिक संरचना, इनके इतिहास लेखकों की आलोचनात्मक दृष्टि आदि पर एक गंभीर अध्ययन को रेखांकित करता है।

संपादकीय किसी भी पत्रिका का प्राण होता है। इस अंक का संपादकीय भी कुछ ऐसा ही है जो 'मिनाब की बच्चियों' के माध्यम से पूरे विश्व में बढ़ते साम्राज्यवाद के खतरे की चिंता के साथ-साथ युद्ध में मारी गई 166 बच्चियों की माँओं के चीत्कार से युद्ध के आग में जल रहे विश्व के प्रति गहरी चिंता व्यक्त करता है। मनुष्यता की पक्षधरता की बात करते हुए संपादक मिनाब की बच्चियों के माध्यम से आक्रांताओं को एक चेतावनी भी देता है कि वे इतिहास में माफी लायक नहीं रहेंगे और इतिहास उन्हें खलनायक और अपराधी की भूमिका में दर्ज करेगा।

नामवर सिंह की विचार यात्रा पर केंद्रित अरुण कुमार का लेख भी गंभीर अध्ययन का परिणाम है। लेखक ने इसमें 'विविधता से सामंजस्य' की ओर अग्रसर नामवर सिंह की विचार यात्रा की मुख्य दिशा से संबंधित प्रश्नों का उत्तर ढूंढ़ने की कोशिश की है। नामवर सिंह हिंदी आलोचना के शिखर पुरुष रहे हैं। अरुण कुमार ने नामवर सिंह की विचार धारा पर आने के लिए मार्क्स की पुस्तक 'पूँजी' के हवाले से ज्ञान के वर्गीकरण, सोवियत संघ के बहुत बड़े विचारक एलेर अजार बालेर के हवाले से वर्तमान बुर्जुआ समाज की स्थिति, विज्ञान और उसके व्यवहार के बीच संबंध, विज्ञान विषयक निबंधों में आचार्य शुक्ल के विज्ञान और धर्म संबंधी विचार, नामवर सिंह का चिंतामणि भाग 3 की भूमिका में शुक्ल जी के धर्म संबंधी विचार और उनकी दृष्टि पर टिप्पणी, नामवर सिंह का शुक्ल की कविता संबंधी दृष्टिकोण का नए सिरे से रेखांकन, शुक्ल और नामवर सिंह की कविता संबंधी दृष्टिकोण का अंतर, भारतीय ज्ञान परंपरा में जन साहित्य की भूमिका, रचना के समय संदर्भ पर गालिब के जरिए डाली गई रौशनी, नामवर सिंह की पुस्तकों 'कविता के नए प्रतिमान' और 'कहानी : नई कहानी' के मार्फत वामपंथ की सीमा, उसकी रणनीतियों से असहमति (सीधे तौर पर नहीं), मार्क्सवाद का 'सापेक्ष स्वतंत्रता' पर बल, रूपवादी आलोचना का मार्क्सवाद पर हमला, कविता क्या है तथा कविता में नया क्या है जैसे बुनियादी प्रश्नों पर एक सजग आलोचकीय दृष्टिकोण से प्रकाश डाला है। साथ ही छायावाद से नयी कविता का अंतर्विरोध, कविता में पहचान का संकट, अंतर्विरोध की पहचान और उससे मुक्ति, टी.एस. इलियट द्वारा अच्छी कविता में बिम्ब अर्थात् इमेज की भूमिका, प्रुफार्क कविता के माध्यम से यथार्थ से दूर विसंगतियों से घिरे आधुनिक मनुष्य का अध्यात्म की ओर लौटना, नए इमेज गढ़ने की बेचैनी, प्रथम विश्व युद्ध के बाद आधुनिक मानव के भीतर की टूटन, नामवर सिंह का शुक्ल के आलोचना विवेक का विश्लेषण, धर्म के ध्वजधारकों का सांप्रदायिकता के पक्ष में खड़े रहना, तुलसी के साहित्य का विश्लेषण तथा वर्तमान में गड़े मुर्दे उखाड़ने वाली सत्ता के प्रतिरोध में नामवर सिंह का अतीत से लड़ने का आहवान लेख को विशेष बनाता है।

नामवर सिंह की वाचिक आलोचना को केंद्र में रखकर लिखा गया प्रो. मृत्युंजय सिंह का लेख भी पत्रिका के सह वाक्य की सार्थकता को दर्शाता है। 'वाद विवाद

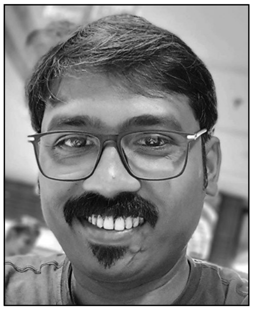

डॉ. राहुल शर्मा

युवा आलोचक।
विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित।
कृतियाँ: 'आलोचना के आईने में'
संप्रति: प्राध्यापन।
संपर्क
सी-371/297/9, बालागड़ मेन रोड
बंडेल चर्च के निकट, पो. हुगली-712103 (प.ब.)
मो.: 9681040946
ई-मेल: rahul9681s@gmail.com

से संवाद' में विश्वास रखने वाले आलोचक नामवर सिंह को लेखक ने 'वाचिक आलोचना' के प्रवर्तक के रूप में स्वीकार किया है। आज आलोचना के स्तर में आ रहे गिरावट के दौर में लेखक का यह लेख अन्य कुछ महत्वपूर्ण बिंदुओं की ओर इशारा करता है। नामवर सिंह के व्याख्यानों के केंद्र में रखकर लिखे गये इस लेख में कथा आलोचना के सूत्रों की प्रासंगिकता पर विशेष बल दिया गया है। कहानी की रचना प्रक्रिया, कहानी को समझने की प्रक्रिया के सूत्र, कहानीकार का यथार्थ और कल्पना के साथ सृजनात्मकता का संबंध, कहानियों का विषय, कहानी का मूल्यांकन, कहानी के पसंद और नापसंद को लेकर उनके विचार, वर्तमान समय में सौंदर्य और कला को प्रभावित करने वाले फिल्मी दृष्टिकोण के माध्यम से कहानी कला को पहुँचने वाले नुकसान आदि का सटीक विवेचन देखने को मिलता है। आशय यह कि यह लेख कहानी की रचना प्रक्रिया, पाठ प्रक्रिया और मूल्यांकन की प्रक्रिया को रेखांकित करता है।

नामवर सिंह पर पूनम सिंह का संस्मरण नामवर सिंह की आलोचना दृष्टि के साथ-साथ छायावाद पुस्तक में उठाये गए प्रश्नों और छायावाद की भाषा के संबंध में उनके विचारों के साथ-साथ उनकी आलोचना की एक अन्य विशेषता विचारधारा और साहित्य के पारदर्शी रिश्ते पर किए गए एक गंभीर अध्ययन को रेखांकित करती है। शैलेन्द्र चौहान, सुधांशु कुमार मालवीय की कविताएँ वैश्विक परिदृश्य में युद्ध की विभीषिका और 'सबसे खूबसूरत आदमी के न मरने की चाहत की इच्छा लिए अंडमान के सेल्यूलर जेल की कोठरियों' तक की यात्रा का घायल वृत्तांत है जिनमें 'विष बोने वालों को कठघरे में खड़ा' किया गया है। अनिल गंगल की 'मजदूर बस्ती से उठती गंध' कविता के श्रम के गान की महत्ता 'काम वाली बाई' में विस्तार पाती है। अनवर शमीम की कविताएँ बुलडोजर समय की त्रासदी की आवाज को अंधेरे में लिपटी दुनिया को सुनाने का आह्वान करती है।

कविताओं के बाद पत्रिका की परिक्रमा हाल-फिलहाल के उपन्यासों पर आकर ठहरती है। संजीव के उपन्यास 'ज्योति कलश' पर अजय महताब का संजीव से लिया गया साक्षात्कार एक सार्थक बातचीत का उदाहरण है। समाज की प्रतिगामी शक्तियों के समाज पर प्रभाव तथा उनके अन्य उपन्यासों के आधार पर पूछे गए प्रश्नों से उन प्रतिगामी शक्तियों को पहचाने और एक लेखक द्वारा उन शक्तियों को देखने की दृष्टि से पाठकों को रु-ब-रु करवाती है। गरिमा श्रीवास्तव (उपन्यास आउशवित्ज पर) से प्रज्ञा की बातचीत भी क्रूरता का जवाब प्रेम रूपी ब्रह्मास्त्र से देने की हिमायत करती है। प्रज्ञा और गरिमा श्रीवास्तव दोनों समकालीन कहानी की सशक्त हस्ताक्षर हैं। दो समकालीनों का यह वार्तालाप स्त्री लेखन के उन सभी बिंदुओं पर रौशनी डालता है जो पितृसत्ता को प्रेम की चुनौती दे रहा है। योगिता यादव के उपन्यास 'ख्वाहिशों के खांडववन' पर जितेंद्र कुमार बिसारिया की बातचीत उपन्यास के बहाने स्त्री विमर्श पर नए कोणों से प्रश्न उठाता है। यह साक्षात्कार इस बात को भी सामने लाता है कि सिर्फ समस्याओं की ओर उंगली उठाने से काम नहीं चलने का बल्कि उसके संभावित समाधान भी प्रस्तुत करने होते है।

राकेश कुमार सिंह का लेख 'आदिवासी आंदोलन, हिंदी साहित्य और इतिहास की समस्याएँ' भी इतिहासकारों द्वारा इतिहास की गलत व्याख्या करना, आदिवासियों के इतिहास का गलत ढंग से प्रस्तुतीकरण, इतिहास का यथासंभव तथ्यों के आधार पर पुनर्जीवित करना आदि लेखक के विस्तृत और गंभीर अध्ययन को दर्शाता है।

जहाँ तक कहानियों की बात है, तो 'परिकथा' का यह अंक 16 कहानियों से समृद्ध हैं। विशेषकर नर्मदेश्वर की कहानी 'ग्रह-शांति' धर्म के आगे मनुष्य को तवज्जो देती कहानी है। 'पिआजू' का एक मुसलमान होकर ग्रह शांति के लिए उपयोग में आने वाली लकड़ियों का उनके नाम के साथ पाँच मिनट में शुभ मुहूर्त में हवन के लिए तैयार कर देना धर्म से मनुष्यता को आगे ले जाकर खड़ा कर देती है। तरसेम गुजराल की कहानी 'गले का हार' मध्यवर्गीय मानसिकता के साथ एक स्त्री के संघर्ष पर दूसरी स्त्री के उठाए गए प्रश्न की कहानी है। अशोक शाह की 'नीला बहेड़ा' आदिवासियों के विस्थापन को केंद्र में रखकर लिखी गई एक मार्मिक कहानी है। सूर्यनाथ सिंह की कहानी 'बंधुए' एक प्रवासी भारतीय का दूसरे प्रवासी भारतीय के लिए किए जाने वाले आंदोलन और उनकी (मानव) दयनीय स्थिति को दर्शाती कहानी है। आदित्य अभिनव की कहानी 'बंदूक' युद्ध की विभीषिका पर केंद्रित है। जनार्दन की 'मिड डे मिल' शिक्षा व्यवस्था में व्याप्त जाति भेद की गंध को उघाड़ती है साथ ही अंजोर सिंह के माध्यम से जाति के इस सर्प दंश का उपचार भी बताती है। चित्रहार (महेंद्र तिवारी), अपनत्व (गंभीर सिंह पालनी), मुक्ति (कमलेश), पोथी पढ़ि पढ़ि (मुकुल जोशी), अंधेरे में तस्वीर (गोविंद सेन) तथा अन्य कहानियाँ अपने विविध विषयों के साथ समकालीन कहानी के फलक को विस्तार देती जान पड़ती हैं।

इस अंक पर कहने को इतना कुछ है कि एक पूरी किताब हो जाए लेकिन सबकी एक सीमा होती है। यह कहते हुए एक निवेदन और कि कृपया पत्रिका की प्रूफ पर थोड़ा ध्यान दिया जाए । किसी भी सारगर्भित अंश को पढ़ने के दौरान प्रूफ की अशुद्धि स्वादिष्ट व्यंजन के बीच कंकड़ का अनुभव देती है । शेष इतना ही कि परिकथा की 111वीं परिक्रमा अपने समय और समाज की सार्थक पहल करती है।

❑ ❑ ❑

वेब अंक
www.notnul.co

परिकथा

समय और समाज की परिक्रमा

वर्ष 21 अंक 112, जुलाई-सितम्बर, 2026

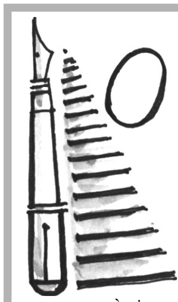

रेखांकन:
सुषमा सिन्हा

सौजन्य-सपादक
अरुण कुमार • अशोक शाह
धनेशदत्त पांडेय • प्रो. माया गोला
मुकुल जोशी

संपादक-मंडल
डॉ. अब्दुल बिस्मिल्लाह
हरियश राय
महेश दर्पण
सूर्यनाथ सिंह

संपादक
शंकर

संपर्क सूत्र
102, बुडबरी टावर
चार्मवुड विलेज
सूरजकुंड रोड,
नई दिल्ली-फरीदाबाद बॉर्डर-121009

दूरभाष
सम्पादकीय/ व्यवस्थापकीय 09431336275
08826011824
कार्यालय (0129) 4116726
email : parikatha.hindi@gmail.com

संयुक्त संपादक
अरविंद कुमार सिंह

संपादन-सहयोगी
अजय मेहताब
रवि कुमार

कला : जयंत
कानूनी सलाह : उत्कर्ष

क्षेत्रीय समन्वयक
अवधेश द्विवेदी

आलोचनात्मक टिप्पणियाँ

- सामाजिक, राजनीति और सांस्कृतिक प्रक्रियाओं के साथ जीवंत और सतत संवाद — शैलेन्द्र चौहान 1
- संकटों को पहचानने का विवेक — शकील सिद्दीकी 3
- समय और समाज को देखने की दृष्टि, सत्य से साक्षात्कार — डॉ. राहुल शर्मा 5

सम्पादकीय

पत्रिकाएँ 9

जन्मशती विशेष

नामवरीय आलोचना की प्रासंगिकता — प्रो. शिवचंद्र प्रसाद 13
हजार हम उसे चाहें कि अब न चाहें... सन्दर्भ, नामवर सिंह — धनेश दत्त पाण्डेय 19

इंटरव्यू

एक चिंगारी कहीं से मिल जाती है कहीं कोई दियासलाई जला देता है — ममता कालिया 25

चौपाल

सूई-धागा — नर्मदेश्वर 32

कहानियाँ

बैरंग चिट्ठी — प्रो. राम चंद्र 35
रास्ते और भी हैं — अखिलेश श्रीवास्तव चमन 42
गलत ट्रेन — डॉ. वंदना मुकेश 48
माटी का आदमी — कल्पना मनोरमा 52
बिजली व्रत — रजनी शर्मा 56
अधिनायक जय हो... — अशोक कुमार 62

राजपाट	डॉ. सुभाष शर्मा	65
ये सब धुआं है...	आशीष दशोत्तर	73
शवसाधना	शिवकिशोर	76
एक रोटी की भूख	अमल सिंह भिक्षुक	82
जोंक	आलोक कुमार सातपुते	90

परिदृश्य

हाल-फिलहाल के उपन्यास

- सूर्यनाथ सिंह के साथ अंकित नरवाल की बातचीत 94
- संतोष दीक्षित के साथ कमलेश की बातचीत 99

कविताएँ

अपनी नदी को छोड़ कर	नरेन्द्र पुण्डरीक	102
आदमी	डॉ. माया गोला	104
युद्ध	नंदा पाण्डेय	105
रे चितेरे	पवन माथुर	107
दादा जी की बरसी	पल्लवी मुखर्जी	108
जिन्हें फेंक दिया गया	महेश केशरी	110
रोटी	भावना झा	113
शून्य	नागेंद्र सिंह गंगोला	114
कविताएँ	हर्ष पाठक	116

लेख

हिंदी दलित कविता: स्वरूप और अंतर्वस्तु	प्रेम कुमार तिवारी	118

लेख

फिलिस्तीन सिर्फ देश का नाम नहीं	आदित्य विक्रम सिंह	122

सिनेमा

हिन्दी सिनेमा में आदिवासी जीवन: यथार्थ, संस्कृति और संघर्ष	डॉ. कुमारी उर्वशी	125

प्रसंग

दिनकर की समकालीन प्रासंगिकता: सामाजिक न्याय के प्रश्न का संदर्भ	डॉ. अनुज	131

किताबें

प्रतिमान के आधार पर 'मेरे नक्शे के मुताबिक': एक पड़ताल	प्रो. अरुण होता	135
'दाग दाग उजाला' : दागदार उजाले की अंतर्कथाएँ	डॉ. बसंत त्रिपाठी	141
'आखिरी पायदान पर खड़ा आदमी' संघर्ष की गाथा	डॉ. अंजु शर्मा	144
'सिंधु घाटी सभ्यता का एक दिन'	चारुमित्रा	146
दूब : प्रकृति, पारिस्थितिकी एवं स्त्री का अनवरत संघर्ष	प्रो. गाजुला राजू	149

परिक्रमा 154

जयप्रकाश, जयमाला, डॉ. अनुज

आवरण-चित्र : **अंतरिक्ष चौहान**, मो.: 9805402242

भीतरी रेखांकन : जयंत, गोविंद सेन, टी.पी. माथुर और लोकेश

कम्प्यूटर सच्चा : **जोशी टाइपसेटर**, म.नं. 31, गली नं. 37-बी, कौशिक इन्क्लेव, बुराड़ी-110084 मो.: 9650463001

'परिकथा' के सदस्यों तक पत्रिका नहीं पहुँच पाने की शिकायतों के बीच यह निर्णय लिया गया है कि 'परिकथा' अब सामान्य डाक से नहीं, सिर्फ रजिस्टर्ड डाक से भेजी जायेगी। सदस्यता शुल्क निम्नवत होगा :

दस अंकीय सदस्यता	1000/-
डाक खर्च	500/-
पाँच अंकीय सदस्यता	500/-
डाक खर्च	250/-

सौजन्य सदस्यता : 10,000 रुपये

यह अंक : 100 रुपये

सभी भुगतान चेक या ड्राफ्ट से या फिर सीधे 'परिकथा' एकाउंट में हो :

PARIKATHA
A/c No. : 50200010771980
Charmwood Village, Surajkund Road
Faridabad-121009
RTGS / NEFT / IFSC : HDFC 0000396

संपादक, सहायक संपादक अवैतनिक, अव्यवसायिक रूप से मात्र साहित्यिक-सांस्कृतिक कर्म में सहयोगी।

रमाशंकर प्रसाद द्वारा डॉलफिन प्रिन्टो ग्राफिक्स, 4-ई/7, पाबला बिल्डिंग, झण्डेवालान एक्सटेंशन, नई दिल्ली-110055 से मुद्रित कराकर 102, बुडबरी टावर चार्मवुड विलेज, सूरजकुंड रोड, नई दिल्ली-फरीदाबाद बॉर्डर-121009 से प्रकाशित।

'परिकथा' में प्रकाशित रचनाओं में विचार लेखकों के अपने हैं।

मौजूदा पता का समावेश और पत्रिका की त्रैमासिक प्रकाशन अवधि आवेदित

संपादकीय

पत्रिकाएँ

इधर पत्रिका विक्रय-केंद्रों, एजेंसियों या किताब की दुकानों से पत्रिकाओं के बारे में जो जानकारियाँ मिल रही हैं, वे ये हैं कि हाल फिलहाल के वर्षों में साहित्यिक पत्रिकाओं की बिक्री में कमी आयी है और यह कमी किसी एक-दो पत्रिकाओं की बिक्री में नहीं, बल्कि अधिकांश पत्रिकाओं के साथ घटित हुई है और यह भी कि यह कमी साप्ताहिक-पाक्षिक समाचार पत्रिकाओं की बिक्री में भी हुई है।

कहना न होगा कि यह उपभोग-संस्कृति, बाजार के विस्तार और संप्रेषण टेक्नोलॉजी के प्रसार से बने माहौल में प्राथमिकताओं के उलटफेर का संकेत है।

अब यहाँ इस सवाल का भी उठना बहुत स्वाभाविक है कि इस स्थिति में क्या साहित्यिक पत्रिकाओं का अस्तित्व ही प्रश्नांतर्गत है या यह महज एक दौर है जिससे निबटा जा सकता है।

इस बिंदु पर बहुत साफ तौर पर सोचा जा सकता है कि यह स्थिति उन पत्रिकाओं के लिए ज्यादा चिंता की वजह है जो सिर्फ व्यवसाय या कारोबार के लिए निकली हैं, जिनको प्रेरणा बिक्री की बढ़ोतरी से मिलती है और जिनकी चिंताएँ बिक्री की कमी से पैदा होती हैं और जिनके अस्तित्व का आधार ही बिक्री की घट-बढ़ है।

ठीक इसकी दूसरी तरफ उन पत्रिकाओं के लिए जो विभिन्न संस्थानों द्वारा साहित्य के पोषण या संवर्द्धन के लिए निकली हैं या किसी-किसी लेखक द्वारा सामाजिक-सांस्कृतिक दायित्वों और उद्देश्यों के बोध के साथ निकाली गयी है, उनके लिए शायद यह मामूली सी ही चिंता है क्योंकि उनकी योजना में बिक्री की चिंताओं को एक छोटी-सी ही जगह हासिल है। ये पत्रिकाएँ प्राप्त बिक्री राशि से नहीं, बल्कि लाभ-हानि से अलग संस्थानों के वित्तीय प्रबंधन के अंतर्गत चलती हैं या पत्रिका निकालने वाले लेखकों के आर्थिक त्याग और उनके मित्रों-शुभचिंतकों के सहयोग-भागीदारी से चलती है। यहाँ बिक्री-राशि योजना में मुश्किल से एक चौथाई-तिहाई तक ही सहायक होती है। एक-दो विज्ञापन मिल जायें तो पत्रिका निकालने वाले लेखक और उसके मित्रों-शुभचिंतकों पर पड़ने वाला बोझ कम हो जाता है और स्थिति सुखद हो जाती है। यदि यह नहीं मिला तो भी पत्रिका निकालने वाले लेखक और शुभचिंतक इस बोझ को आपसी समझदारी से उठा लेते हैं और पत्रिका को जिलाये रखते हैं।

सच यह है कि अधिकांश साहित्यिक पत्रिकाएँ बिक्री आधारित लाभ-हानि की संगणना से नहीं चल रही हैं। इनके अपने स्वप्न हैं, इनके अपने रास्ते हैं, प्रतिकूलताओं, मुश्किलों से लड़ते-भिड़ते रहने और टिके रहना का इनका अपना जुनून है।